गुणों और विशेषताओं के धनी ब्रह्मा बाबा

- भ्राता जगदीश चन्द्र

प्रजापिता ब्रह्मा अनेकानेक विशेषताओं और महानताओं के धनी थे। जैसे गुड़ को किसी ओर से भी चखा जाये तो वह मीठा लगता है, वैसे ही ब्रह्मा बाबा के जीवन के किसी भी पहलू पर दृष्टि डालने से उनमें दिव्य गुणों ही का मिठास अनुभव होता था। ब्रह्मा के जो भी चित्र आज भक्तिभाव वाले लोग श्रद्धा-भावना से प्रयुक्त करते हैं, वे यही तो प्रदर्शित करते हैं कि ब्रह्मा जी बहुमुखी थे और कई भुजाओं वाले थे। इसका एक भाव यही है कि वे सभी ओर ध्यान देते थे और एक ही समय में कई कार्य कर रहे होते थे अर्थात् उनके हरेक कर्म द्वारा अनेकों की सेवा हो जाती थी। वे सभी का ध्यान रखते थे और सभी का लालन-पालन करते थे; वे यह नहीं कहते थे कि मैं एक हूँ, आप अनेक हैं, आखिर मैं अकेला किस-किस का ध्यान करूँ, किस-किस पर वरद् हस्त रखूँ? वे मुख से जो बात कहते थे, वह केवल उनके सामने बैठे हुए लोगों के लिए ही नहीं होती थी बल्कि पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण सभी दिशाओं में बसे हुए जन-समूहों के लिए हितकर होती थी और वे सभी को एक-साथ सम्बोधित करते थे। इस अर्थ में ही वे बहुमुखी थे। उनकी कृपा एक हाथ ही से नहीं होती थी, वे तो एक ही क्षण में बहुजनों को अपने सहयोग का हाथ, प्यार और दुलार का पैतृक हस्त अथवा सद्गुणों-जैसा आन्तरिक अथवा गुप्त सहारा दे रहे होते थे, ऐसा अनुभव उन सभी ने किया जो उनके सम्पर्क में आये। वे एक ही दिन में इतने वत्सों को उनके पत्रों का उत्तर दे देते थे कि ढेर सारे पत्र देखकर कोई भी सोच में पड़ जाता कि इनके कितने हाथ हैं! उनके हाथ थे भी 'लम्बे'; उन्हें कहा जाता है 'दीर्घ बाहु' क्योंकि उनकी पहुँच दो-ढाई फुट तक न थी बल्कि दूर नगरों और गाँव में बैठे हुए वत्स भी उनके हाथों से लिखे पत्र, भेजी हुई 'टोली' (प्रसाद), हिम्मत बढाने वाला हाथ अपने सिर पर अथवा पीठ पर अनुभव करते थे।

उनका जीवन ही वेदमय था

भक्तों के प्रिय चित्रों में ब्रह्मा जी के एक हाथ में तो 'सिमरनी' (जपमाला) दिखायी जाती है क्योंकि वे 'कर्मयोगी' थे, हाथ कार्य में होने पर भी उनके मन में प्रियतम प्रभु की याद निरन्तर चलती रहती थी। परन्तु माला में एक ही मणका तो नहीं होता, कई मणके होते हैं। अतः वे शिव बाबा की स्मृति में तो रहते ही थे परन्तु योगी और सहयोगी, वफादार और फरमाँबरदार वत्सों को भी याद करते थे। वे केवल प्राप्त हुए

पत्रों का ही उत्तर नहीं देते थे बल्कि पत्र लिखने में पहल भी किया करते थे। बच्चों के नाम की माला फेरने अथवा सिमरण करने वाले वे बहुत ही स्नेहशील थे और वत्सों के प्रति ऐसे तो प्यार से छलकते थे और प्रेम- प्लावित होते थे कि मानो अपने प्यार रूपी पंखों के नीचे ही आत्माओं को लिये रहते थे। प्यार रूपी जल से वे सभी के हृदय को सींचते रहते थे। विवेक रूपी हंस पर वे आरूढ रहते थे; कभी भी सद्विवेक से नीचे नहीं उतरते थे। 'वेद', जिसका अर्थ है 'ज्ञान' को वे कभी छोड़ते ही नहीं थे। भाव यह है कि अज्ञानता या लौकिकता में लाने वाली बातें वे नहीं करते थे बल्कि उनका जीवन ही वेदमय था, चाहे उसे कोई भी पढ़ ले। पंडित लोग तो पुस्तक-पोथी पढ़कर, उसे बन्द करके, उसको कपड़े में लपेट कर और लाल डोरे से बाँधकर रख छोड़ते हैं और फिर अगले दिन दोबारा खोलकर पढ़तो हैं। वो तो "कथा समाप्त होती है, सुनो वीर हनुमान, राम लक्ष्मण जानकी, सदा करें कल्याण..." कहकर कथा बन्द कर देते हैं। परन्तु ब्रह्मा बाबा द्वारा तो सृष्टि के आदि-मध्य-अन्त की अमरकथा, कल्प- कथा, सत्यनारायण की कथा सदा अमर भाव से चलती ही रहती थी। खाँसी में भी उनका गला शिव जी के डमरू की ध्वनि सुनाकर अगम-निगम के भेद खोलता था। वे विश्राम कर रहे हों तो उससे भी कुछ सीखने को मिलता था, गोया वे ज्ञान की धारणा का प्रदर्शन (*Demonstration*) दे रहे हों, जैसेकि वैज्ञानिक विज्ञान के किसी सिद्धान्त को प्रयोगशाला में दिखाते हैं या हठयोगी शवासन करके दिखाते हैं। उनकी नेत्र-मुद्रायें भी बहुत निहाल करने वाली थीं। आँख ही आँख से वे स्वीकृति अस्वीकृत, स्नेह-सहृदयता, करो-न-करो (*Do, not do*) के इशारे दे देते थे। आँखों से न जाने 84 भाव वे कैसे प्रगट करते थे कि बोलने की ज़रूरत ही नहीं होती थी। हमने प्रारम्भ में ही कहा है कि वे अनेकानेक सद्‌गुणों के धनी थे। उनके गुणों की गाथा तो लम्बी है। यहाँ कुछ ही विशेषताओं की चर्चा कर लेते हैं ताकि अपने जीवन का हम मिलान करके देखें कि हम इनमें से कितने गुणों में बाप-समान बने हैं। हिन्दी वर्णमाला में 'स' अक्षर का अपना ही विशेष स्थान है क्योंकि यह अक्षर अन्तिम है और 'स' उससे पहले है। गुणों के वर्णन का अन्त हमने करना नहीं है, इसलिए 'स' अक्षर से प्रारम्भ होने वाली विशेषताओं का हम यहाँ उल्लेख कर रहे हैं क्योंकि वे गुणों की प्राय: सारी वर्णमाला को लिये हुए हैं।

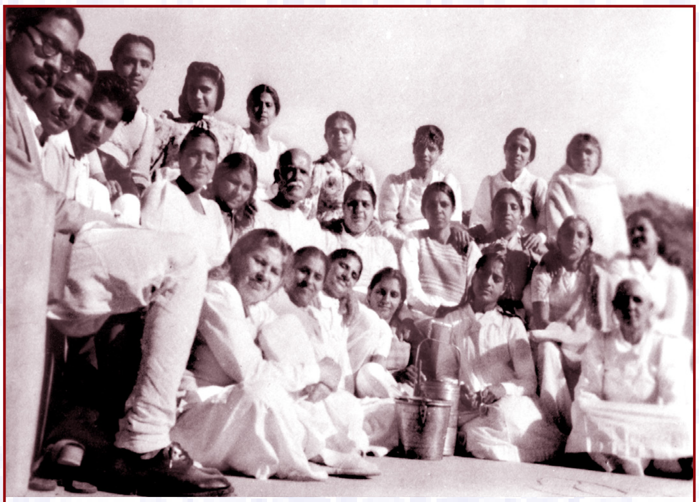
भ्राता जगदीश जी एवं अन्य भाई-बहनें बाबा के साथ

1. सत्यता

उनका आध्यात्मिक जीवन 'सत्य' की खोज को लेकर ही शुरू हुआ। सत्य को जानने के लिए ही वे गीता प्पढ़ते थे और गुरुओं के प्रवचन सुनते थे। परन्तु चूँकि इससे सत्य का बोध नहीं हुआ, इसलिए उनकी प्यास बढ़ती गयी। आखिर वह घड़ी आयी जब स्वयं सत्य स्वरूप परमात्मा ने स्वयं उन्हें सत्य का पाठ पढ़ाया। जब उन्होंने सत्य का साक्षात्कार किया, सत्य के मार्ग को जाना और परमात्मा रूप सद्गुरु को पहचाना तब वे उसको ग्रहण करने में इतनी लगन से लग गये कि दुनिया में और ऐसा उदाहरण मिलना कठिन है। सत्य को पहचानते ही वे सब- कुछ समेटकर सत्य को आत्मसात करने में जुट गये। राज्य किसी और धर्म वालों का था, नगर में ज़्यादा जनसंख्या और विधान सभा में सदस्यता की अधिकता किसी भिन्न धर्म वालों की थी और अपने धर्म वाले तो धर्म अथवा सत्यता को भूल ही चुके थे। अतः किसी भी ओर से सहयोग नहीं मिला बल्कि कड़ा विरोध ही हुआ। शरीर 60 वर्ष का था, वे अकेले थे, विघ्नों के तूफान उठ खड़े हुए, मुखिया लोगों ने उन पर दबाव डाला कि वे सत्य को छोड़ दें या उसमें मिलावट करके उसे 'पतला' (*Dilute*) कर दें परन्तु वे सत्य के मार्ग पर अडिग रहे। उन्होंने सत्य को नहीं छोड़ा। ऐसे आड़े समय में मित्रों ने उनका साथ छोड़ दिया परन्तु स्वयं उन्होंने सत्य का साथ नहीं छोड़ा। जो बात जान ली, पहचान ली, मान ली, उसे उन्होंने दृढतापूर्वक पकड़े रखा। "धरति पर पड़िये परन्तु धर्म न छोड़िये" इस उक्ति के अनुसार उन्होंने धमकियाँ और धमाकों का सामना किया परन्तु सत्य से मुख नहीं म्मोड़ा। यदि वे चाहते तो ईश्वरीय ज्ञान में थोड़ी-बहुत प्रचलित असत्य मान्यतायें मिला देते; तब तो उनके प्रवचनों को सुनने बहुत बड़ी संख्या में लोग आते और न जाने आज कितनी संख्या में लोग उन्हें मानते! परन्तु उन्होंने अमानत में ख्यानत नहीं की; सत्य में असत्यता का जरा भी समावेश नहीं होने दिया और धारणाओं तथा नियमों में ढील नहीं दी। इस प्रकार, सत्य 'सत्याग्रह' तो उन्होंने किया। उन्होंने अपने अनुभव के आधार पर दूसरों को भी यही कहा कि "सच्चे दिल पर साहब राज़ी होता है", "सच की बेड़ी तूफानों में डोलेगी परन्तु डूबेगी नहीं" और कि "मन में है सच तो नच बेटा नच (नाचो)।" जो सत्य को पहचानने के बाद भी उसे ग्रहण करने के मामले में लोगों से डरता है, लोकलाज और कुल के भय से पीड़ित होता है या बहाने बनाता है, उसे तो उन्होंने कायर' कहा है! वह तो शम्मा के गिर्द फेरे लगाने वाला पतंगा है, कुर्बान जाने वाला पतंगा नहीं है। जो डर के मारे सत्य से भी दूर भागता है, उस नर की तो क्या कहें? वह तो भेड़-बकरी है; वह शेरों के झुण्ड में कैसे आ सकता है? अतः करोड़ों में से कोई विरला ही इस आश्चर्य की न्यायीं

सत्य को पहचानता है और पहचान कर भी बहुत-से तो 'भागन्ति' हो जाते (भाग जाते) हैं और सत्य के लिए कमर कसकर समर में जाने वाला तो कोई विरला ही शूरवीर निकलता है। उसमें वे शिरोमणि थे और दूसरों के लिए भी प्रेरणा के स्रोत थे और भगवान के लिए उपयुक्त एवं मज़्ज़बूत रथ और सही मुख थे।

2. समर्णमयता

सत्य तो कल्याणकारी होता है। अतः जब परमसत्य को जान लिया तो ब्रह्मा बाबा ने उस सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् को सर्वस्व समर्पण कर दिया। उस पर जीवन ही न्योछावर कर दिया। अब किसी भी चीज़ में उनका 'मेरापन' नहीं रहा। "मैं तेरा, केवल तू मेरा" यह भाव उन्हों ने दृढ कर लिया। सजनी साजन को तन-मन समर्पित करती है, सेवक स्वामी को समय और सेवा समर्पित करता है, भक्त भगवान को पत्र-पुष्प, फल- जल अर्पण करता है परन्तु उन्होंने तो कुछ भी 'अपने' या 'मेरे' भाव से रखा नहीं, बल्कि जो कुछ भी था, वह प्रक्टीकल रीति से प्रभु-समर्पित कर दिया। इसमें सभी तरह का त्याग समाया था और वैराग्य भी भरा था। उन्होंने शिव बाबा को पूर्ण रूपेण अपना लिया, इसलिए शिव बाबा ने भी उन्हें अपने 'माध्यम' अथवा 'रथ' के रूप में अपना लिया। अब वे एक ही के बल और एक ही के भरोसे पर चलने लगे। उन्होंने सभी सम्बन्ध उस एक ही से जोड़ लिये और सब ओर से रस्सियाँ तोड़ दीं तथा लगाव-झुकाव समाप्त कर दिये। ऐसी समर्पणमयता का दृष्टान्त भी संसार में और कोई नहीं मिलेगा। शिव बाबा की आज्ञाओं का पालन करने के लिए उन्होंने कभी भी कोई कमी नहीं रखी क्योंकि उनका तो अब जीवन ही उसी को समर्पित था। जब तन भी शिव बाबा को समर्पित कर दिया तो अब अशरीरी अवस्था सहज स्वभाव हो गयी और तन द्वारा सतत् निरन्तर शिव बाबा की सेवा होने लगी।

3. साधना

उनका जीवन साधना का भी एक साक्षात ऑ नमनू ा था। वे साधन इकट्ठे करने में नहीं लगे बल्कि साधनामूर्त बने रहे। उनकी सारी दिनचर्या में ही तपस्या झलकती थी। उनके नैन-बैन इस भाव को प्रगट करते थे कि उनका मन योगयुक्त है। साधना अथवा योग के प्रकम्पन सदा उनसे विनिसृत होते अनुभव होते थे। प्रायः लोग घंटा-

आधा घंटा योगाभ्यास करके, फिर दूसरे कार्यों में ऐसे तो लग जाते हैं कि उन्हें आत्मा के स्वरूप की और परमपिता परमात्मा की विस्मृति हो जाती है परन्तु ब्रह्मा बाबा तो बातचीत अथवा कार्य-व्यवहार करते भी ईश्वरीय स्मृति में प्रायः स्थिति बनाये रखते थे। यही कारण था कि जो कोई भी उनके सम्पर्क में आता था, वह स्वयं भी देह से न्यारापन और एक चुम्बकीय आकर्षण अनुभव करता था।

4. सद्‌गुण धारणा

सद्‌गुणों पर उनका पूर्णतया ध्यान था। वे गुण रूपी मोती चुगते और दुर्गुण रूपी कंकड़ छोड़ देते। परमात्मा की महिमा में वे लगे रहते क्योंकि उन्हें परमपिता परमात्मा के अनेकानेक गुणों का अनुभव हुआ था। विशेष तौर पर पवित्रता, करुणा, निरहंकारिता या नम्रता, उदारता, सहनशीलता इत्यादि पर उनका पूरा ध्यान था। उनके स्वभाव में सरलता तो छोटे बच्चों से भी अधिक थी। सादगी और बचत के तो वे अवतार थे। न वे कभी फ़िज़ूल खर्च करते, न ही ठाठ-बाट पर रुपया-पैसा खर्च करते। वस्तुओं को यों ही इकट्‌ठा करने की उनकी प्रवृत्ति ही नहीं थी। परन्तु उनकी सादगी, स्वच्छता के उच्चतम स्तर को लिये हुए थी। तन-मन, धन-स्थान, खान-पान, रहन-सहन, वेष-व्यवहार सभी में स्वच्छता, पवित्रता और निर्मलता को मुख्य स्थान प्राप्त था। हरेक के प्रति सद्‌भावना उनके मन में बनी रहती थी और वे सदा कल्याण-भावना में तत्पर रहते थे। कभी रुष्ट, उदास, मायूस, हतप्रभ या दिलशिकस्त तो उन्हें किसी ने देखा ही नहीं बल्कि दूसरे सदा उनसे उत्साह, उमंग, प्रेरणा प्राप्त करते रहे। वे सदा सक्रिय होते भी अथक थे और कभी उन्हों ने आलस्य या अलबेलेपन का कोई चिन्ह नहीं दिखाया। वे सदा एक अद्‌भुत स्फूर्ति को लिये हुए होते थे और दृढ निश्चयवान थे तथा असफलता में भी असन्तुष्ट नहीं होते बल्कि सदा सन्तुष्ट रहते थे। वे सदा सकारात्मक चिन्तन (*Positive thinking*) करते थे और समय को साधना में सफल करते थे। समय को अनमोल मानते हुए वे एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गँवाते थे।

5. सात्त्विकता

उन्हें जो पहले-पहले साक्षात्कार हुआ था, तभी यह ईश्वरीय निर्देश मिला था कि आपको ऐसी सतयुगी सृष्टि की रचना करनी है अर्थात् सात्त्विक समाज-व्यवस्था की नींव रखनी है। अतः इनके लिए स्वयं उनका तो सात्त्विक बनना स्वाभाविक ही था। उनको देखकर ही लगता था कि अब सतयुग आयेगा अथवा कि मनुष्य हो तो ऐसा हो। मधुबन रूपी जो उनकी कर्मभूमि थी, उसमें जाकर ठहरने वाले यही कहा करते कि यहाँ ही स्वर्ग है। न क्रोध, न तनाव, न गन्दगी, न झड़प न झगड़ा, न रोग,

न शोक जहाँ शान्ति का साम्राज्य हो, वही तो स्वर्ग है। यह सब ब्रह्मा बाबा ही का सात्त्विक प्रभाव था और है।

6. सभी के साथ सम्मान का व्यवहार

कभी भी किसी ने उन्हें किसी का तिरस्कार करते नहीं देखा, न किसी को दुत्कारते सुना। वे अत्यन्त शालीनता पूर्वक व्यवहार करते थे और छोटे-बड़े सभी को सम्मान से सम्बोधित करते, उन्हें सम्मान सूचक कोई नाम देते तथा गुणों का उत्कर्ष करने वाली ही कोई बात उनसे कहते थे। किसी का अपमान उन्हें अच्छा ही नहीं लगता था बल्कि वे तो मर्यादा और सुखसत्कार की सृष्टि स्थापन करने के लिए निमित्त थे।

7. स्नेह और सहृदयता

वे प्यार के सागर थे। स्नेह से उनका मन सदा प्लावित रहता था। हर कोई यह अनुभव करता था कि वे उसे ही सर्वाधिक प्यार देते हैं। उनके वचन और व्यवहार को देखकर ही लगता था कि अब प्यार की दुनिया अवश्य ही स्थापन होगी। उनके रूहानी प्यार ने ही अनेकों को यह बल दिया कि जिससे वे मोह-ममता और विकार तथा स्वार्थ का त्याग कर सके। उनके प्यार ने ही आत्माओं को उन्नति के पथ पर आगे बढ़ाया। यह प्यार निःश्छल, निःस्वार्थ और आत्मिक था; उसमें देह के आकर्षण या माया की मिलावट जरा भी न थी। ऐसे प्यार से उन्होंने दूसरों के मन को भी निर्मल बना दिया।

8. सेवा

जीवन का क्षण-क्षण, पल-पल सब की रूहानी सेवा में लग जाये, यह ही उनकी सतत् दिनचर्या थी। "सारे संसार को सन्देश पहुँचाना है", "कोई भी आत्मा ज्ञान से वञ्चित न रहे", " जो भी सम्पर्क में आये, वह खाली हाथ न जाये" यह उनके सामने लक्ष्य था। अतः देह होते भी विदेह अवस्था में स्थित होकर वे अथक सेवा में लगे रहे और शरीर छोड़ने से पहले भी सभा-भवन में वत्सों को सन्देश-निर्देश दे आये। बाबा, तू ने कमाल कर दिया! इस प्रकार, उनके गुणों का जितना वर्णन किया जाये, कम है।

ओम् शान्ति